❀ ओ३म् ❀

हम आर्य हैं

आर्य्य हमारा नाम है, वेद हमारा धर्म ।
ओ३म् हमारा देव है, सत्य हमारा कर्म ॥

पं० भद्रसेन आचार्य्य
विरजानन्द वेद विद्यालय अजमेर
द्वारा लिखित

तथा

कुंवर ज़ालिमसिंह कोठारी बी० ए०,
भूतपूर्व दीवान राज्य बांसवाड़ा तथा
प्रधान आर्य्य प्रतिनिधि सभा
राजस्थान व मालवा द्वारा
प्रकाशित

तथा

...थमल लूणिया द्वारा
...प्रेस, केसरगंज अजमेर में मुद्रित

मूल्य एक आना } आर्य्य संवत् १९७२९४९०३६

में प्रकाशित कराने का अनुरोध किया। अपने आर्य बन्धुओं के अनुरोध से ही मैंने उसी विषय को अधिक तथा उपयोगी बना कर पुस्तक रूप में प्रकाशित कर दिया है। आशा है कि आर्य पुरुष इस पुस्तक को मनन पूर्वक पढ़ेंगे। तथा इसे अपने जीवन में चरितार्थ करेंगे।

इस पुस्तक के प्रकाशित करने का श्रेय श्रीमान् धर्मपरायण कुँवर जालिमसिंहजी कोठारी बी. ए. को है। अतः इसके लिये मैं उनको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

भद्रसेन

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तक-विवरण की तिथि नीचे अंकित हैं । इस तिथि सहित ३०वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए । अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा ।

भूमिका

इस भूमण्डल में देश और जातियों की नामावली पर विचार करने से ऐसा प्रतीत होता है कि उनके नाम देने की दो प्रथाएं हैं।

एक तो देशका नाम उन जातियों के नामों पर अङ्कित किया जाता है, जो उस देश में बसती हैं, जैसे अफग़ानिस्तान बिलोचिस्तान जर्मनी आदि। और दूसरे देशों के नाम उनके आस पास की प्राकृतिक रचना के कारण से अङ्कित कर, जो जाति वहां बसने को आती है, उसका नाम उस देश के नाम के अनुसार अङ्कित किया जाता है, जैसे सिन्ध, पंजाव, हवश देश के बसने वाले सिन्धी, पंजाबी हबशी कहलाए।

प्राचीन वैदिक साहित्य में प्रथम मनुष्यों की उत्पत्ति त्रिविष्टप अर्थात् तिब्बत में होना लिखा है। और अर्वाचीन भूगोल और खगोल वेत्ताओं का जैसा अनुमान है कि मनुष्यों की उत्पत्ति पहिले पहल हिमालय पर्वत के दामन पामीर स्थल में हुई, और यहीं से वे सारे संसार में फैले। प्राचीन समय में यह "पामीर" इसी देश का एक भाग था। अतः इस देश के प्राचीन इतिहास लेखकों का अनुमान ठीक दिखाई देता है कि उस समय जो मनुष्य उत्पन्न हुए, वे यहीं रहते थे, और उनके दो भाग थे।

एक तो वे कि जिनके हृदयों में परमात्मा की कृपा से वेदों के ज्ञान का प्रकाश हुआ। दूसरे वे जो वैदिक ज्ञान से

वञ्चित रह कर धर्मविहीन काल विताने लगे। वैदिक साहित्य में पहिलों को आर्य अर्थात् सुर, श्रेष्ठ और ज्ञान वाले पुरुष माना है, और दूसरे लोगों को "दस्यु" अर्थात् असुर माना है। और जिस देश में आर्य लोग बसे उसे आर्यावर्त कहा। और ये ही लोग योरप में भी फैले। आजकल भी जर्मन जिसका कि वास्तविक नाम संस्कृत में शर्मन् है अपने को आर्य मानते हैं। प्राचीन समय में इस आर्यावर्त में एक बहुत प्रतापी चक्रवर्ती राजा "भारत" के नाम से हुआ, और इनके नाम पर ही यही आर्यावर्त देश आगे चलकर "भारतवर्ष" कहलाया।

आर्यावर्त के मैदानों के नीचे विन्ध्याचल पहाड़ है। प्राचीन काल में इसके दक्षिण में जैसा कि रामायण से जो इस देश का एक पुराना ऐतिहासिक ग्रन्थ है, पाया जाता है कि एक दूसरी जाति के लोग जिनको आजकल "द्राविड़ियन" कहते हैं, बसते थे, जब आर्य लोग आगे बढ़े, तो वे इनसे मिल जुल गये और इस प्रकार यह सारा देश हिमालय से लेकर कन्या कुमारी तक आर्यावर्त अथवा भारतवर्ष कहलाने लगा। और यहां रहने वाले आर्य। इसलिये यही आर्य शब्द इस देश वासियों का असली नाम है।

जब यूनानियों ने ई० सन के ३२५ वर्ष पूर्व इस देश पर आक्रमण किया। उस समय उन्होंने अपनी भाषा की नामकरण पद्धति के अनुसार सिन्ध नदी के नाम के प्रथम अक्षर सकार को अंत में लगा कर सिंधु का नाम इंडस (Indus) और देश का नाम इण्डिया (India) लिखा।

जब तुर्कों ने लग भग एक हजार वर्ष पश्चात् इस देश पर

आक्रमण किया, उन लोगों ने जो अपनी बोली में सकार को हकार उच्चारण करते थे सिंध को हिन्द कहा और हिंद में रहने वालों को हिंदू—

जब तुर्कों से पीछे आने वाले मुसलमानों ने इस देश में राज्य स्थापित किया तो चूंकि उनकी अर्बी भाषा में हिंदू शब्द का अर्थ गुलाम या काफ़िर था और उन्होंने इस देशवासियों को फ़तह कर लिया था। इसलिये उन्हें भी यह हिंदू नाम ही इस देश वासियों के लिये ठीक लगा। इसलिये आर्यों को हिंदू तथा आर्यावर्त को हिंदुस्थान के नाम से प्रसिद्ध कर दिया।

उपर्युक्त विवेचना से पाठकों को भली प्रकार विदित हो गया होगा कि हिन्दू नाम इस देश वासियों का असली नाम नहीं। ऐसी अवस्था में इस देश वासियों का यह परम कर्त्तव्य है कि इस असभ्य तथा अनुचित 'हिन्दू' नाम को सर्वथा तिलांजलि दे दें, क्योंकि जिस शब्द का किसी भाषा में 'गुलाम' या काफिर अर्थ हो उसको आर्य अर्थात् श्रेष्ठ पुरुष अपना नाम कभी स्वीकार नहीं कर सकते।

यह हिन्दु शब्द ऐसे भी बड़ा मनहूस अर्थात् गुलामी तथा हीनता का द्योतक है। इस लिये हमारा विश्वास है कि जब तक यह हिन्दू नाम इस देश में प्रचलित रहेगा, तब तक यहां के रहने वाले गुलामी में ही जकड़े रहेंगे। क्योंकि नाम का भावों पर बहुत प्रभाव पड़ा करता है।

हमारे मुसलमान तथा इसाई भाइयों को यदि आर्य नाम स्वीकार न भी हो तो भी वे अपने को हिन्दी न कह कर भारती ही कहें तथा इस देश को भारत के नाम से ही पुकारें।

क्योंकि ऐसा सुना जाता है कि जब मुसलमान हज करने के लिये अरब और मिश्र में जाते हैं तो वहांके लोग इन्हें भी हिन्दू नाम से ही पुकारते हैं, जिसका कि अर्थ इनकी ही भाषा में गुलाम और काफ़िर है।

इस देश की ऐक्यता तथा उन्नति को लक्ष्य में रख कर भारत सरकार का भी कर्तव्य है कि वह इस देश को हिन्दुस्तान तथा इस देश वासियों को हिन्दू न लिखें पढ़ें।

उस महर्षि बालब्रह्मचारी दंडी स्वामी दयानन्द सरस्वती का अनेकानेक धन्यवाद है कि जिन्होंने इस देशवासियों के नाम का वास्तविक स्वरूप हमारे सन्मुख प्रकट कर दिया।

श्रीमान् पं० भद्रसेनजी आचार्य विरजानन्द वेद विद्यालय अजमेर ने जो अष्टाध्यायी महाभाष्य और योग शास्त्र के विद्वान् तथा वेदों और उपनिषदों के बड़े प्रभावशाली व मार्मिक व्याख्याता हैं, इस पुस्तक में वैदिक धर्मानुयायी सज्जनों को विशेष तौर पर अपने लिये हिन्दू शब्द का प्रयोग कभी न करना चाहिये इस बात को बड़ी उत्तमता से दर्शाया है जिसको पढ़ने के पश्चात् आर्य-मात्र हिन्दू शब्द तथा हिन्दू प्रणाली के साथ अपना कभी सम्बन्ध नहीं रखेंगे। इति शुभम्।

श्रीनगर रोड अजमेर
मि० फाल्गुन कृष्ण ५ बुद्धवार
सं० १९९२

जालिमसिंह

॥ ओ३म् ॥

"हम आर्य हैं"

ओ३म् इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम ॥
अपघ्नन्तोऽराव्णः ॥

सज्जनों !

भगवान् दयानन्द का कोटिशः धन्यवाद है कि जिसने हम को अविद्यान्धकार से निकाल, विद्यारूपी सूर्य का दर्शन कराया। धर्म के नाम पर प्रचलित मिथ्याडम्बरों को दूर कर धर्म के शुभ्र स्वरूप को हमारे सम्मुख उपस्थित किया। नाना मत-मतान्तरों में विभक्त हुई आर्यजाति को वैदिक धर्म के पवित्र झण्डे तले लाने का आजीवन भरसक प्रयत्न किया। सदियों से परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े हुए हम भारतीयों को स्वन्त्रता का पाठ पढ़ाया। नाना जाति उपजाति आदि विभागों में विभक्त होकर गाढ़ निद्रा में सोई हुई आर्यजाति के सामने एकता, प्रेम और संगठन का बिगुल बजाया। अहर्निश होने वाले विधर्मियों के आक्रमणों से मरणोन्मुख हुई आर्यजाति को "शुद्धि" रूपी संजी-वनी पिला उसमें पुनः नव-चैतन्य का संचार किया। हम सब प्रकार से गिर चुके थे, भगवान् दयानन्द ने अपनी अपार कृपा से हमें अधःपतन से ऊपर उठा, उन्नति के शिखर पर आरूढ़

करने का भरसक प्रयत्न किया। हम अपने असली नाम तक को भी भूल चुके थे, तथा हिन्दू आदि अवैदिक तथा गर्हित नामों से अपने को पुकारने लग पड़े थे। भगवान् दयानन्द ने हमें बताया कि तुम "काफ़िर तथा गुलाम हिन्दू" नहीं हो, प्रत्युत् प्रभु के अमृत पुत्र "आर्य्य" हो। तुम्हारा देश हिन्दुस्तान नहीं, अपितु "आर्यावर्त" है। तुम्हारी जाति हिन्दू-जाति नहीं, अपितु आर्यजाति है। तुम्हारा धर्म हिन्दू धर्म नहीं, अपितु पवित्र आर्य-धर्म है। मैं भगवान् दयानन्द के उपकारों का कहां तक वर्णन करूं। कौन सा ऐसा उपकार है, जो ऋषि दयानन्द ने हमारे ऊपर न किया हो। आज ऋषि के सिद्धान्तों की दिग्विजय हो रही है। प्रत्येक राष्ट्र प्रत्येक जाति तथा प्रत्येक धर्म ऋषि के चरणचिह्नों पर चल कर ही अपने को उन्नत तथा उज्ज्वल करना चाहता है। किन्तु खेद है कि हम ऋषि के अनुयायी ऋषि के प्रदर्शित मार्ग से विचलित होते जा रहे हैं। हमने ऋषि के दर्शाये पवित्र वैदिक सिद्धान्तों पर आचरण करना छोड़ दिया है। और सब से बढ़कर दुःख तथा शोक की बात तो यह है कि हम जहां आर्यत्व से दूर होते जा रहे हैं, वहां ऋषि के बतलाए पवित्र " आर्य्य " नाम को भी तिलाञ्जलि देते जा रहे हैं और अपने को हिन्दू आदि अवैदिक नामों से पुकारने लग पड़े हैं।

ऋषि ने हमारे अन्दर से हिन्दूपन को दूर कर हमें "आर्यत्व" प्रदान किया था। ऋषि ने हमें बताया था कि तुम मुर्दादिल हिन्दू नहीं हो, अपितु आनन्द और उत्साह के केन्द्र शूरवीर "आर्य्य" हो। इसी लिए ऋषि ने हमारे समाज का नाम भी "आर्य्यसमाज" अर्थात् आर्यों का समाज रखा था न कि

हिन्दू-समाज। ऋषि की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि सम्पूर्ण भारतवासी अपने हिन्दुपन तथा विधर्मियों की ओर से बलात् आरोपित किये हुए गर्हित हिन्दू नाम को छोड़ कर, जीवन, ज्योति, उत्साह और पवित्रता के द्योतक "आर्य्य" नाम को ही अपनावें। इसी लिए ऋषि ने हिन्दू नाम प्रिय हिन्दुओं को भी कभी हिन्दू कह कर नहीं पुकारा। उन्होंने अपने ग्रन्थों में भी सब जगह भारतीयों को आर्य ही लिखा है। इस देश को "आर्यावर्त" तथा जाति को "आर्य-जाति" के नाम से पुकारा है। हिन्दू-जाति या हिन्दुस्तान के नाम से नहीं। ऋषि सत्यार्थप्रकाश के दशम समुल्लास में लिखते हैं:—

"विदेशियों के आर्यावर्त में राजा होने के कारण, आपस की फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना, विद्या का न पढ़ना वा बाल्यावस्था में विवाह, विषयासक्ति, मिथ्या-भाषण आदि कुलक्षण, वेद-विद्या का अप्रचार आदि कुकर्म हैं...... । न जाने यह भयंकर राक्षस कभी छूटेगा या आर्य्यों को सब सुखों से छुड़ा, दुःख-सागर में डुबा मारेगा। उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्र-हत्यारे, स्वदेश विनाशक, नीच के दुष्ट मार्ग में आर्य लोग अब भी चल कर दुःख उठा रहे हैं। परमेश्वर कृपा करें कि यह राज-रोग हम आर्य्यों में से नष्ट हो जाय।"

इसी प्रकार अन्य भी कई स्थानों पर ऋषि ने भारतीयों को आर्य्य नाम से पुकारा है। किन्तु खेद है कि हम ऋषि के अनुयायी हिन्दुओं को आर्य्य कहना तो अलग रहा अपने को भी हिन्दू कहने लग पड़े हैं। ऋषि ने अपने जीवन-काल में एक

मनुष्य से पूछा था कि तुम कौन हो ? उस मनुष्य ने उत्तर दिया—"हिन्दू"। यह सुनकर ऋषि ने कहा—"भाई ! काम-भ्रष्ट तो हुए ही थे, पर नाम-भ्रष्ट तो मत होवो !" आज ठीक यही दशा हमारी होरही है। हम जहां आर्य्यत्व को छोड़कर काम-भ्रष्ट हो रहे हैं, वहां अपने को हिन्दू कह कर नाम भ्रष्ट भी होते जारहे हैं। आज यदि ऋषिवर यहां होते और उनको यह मालूम हो जाता कि जो उत्तर मैंने उस हिन्दू नामाभिमानी को दिया था, उसी उत्तर के अधिकारी आज मेरे अनुयायी भी बनते जारहे हैं, तो उनके आत्मा को कितना दारुण दुःख होता। कितने शोक की बात है कि जहां पहिले हमारे व्याख्यानों में—आर्य्य, आर्य्य-जाति, आर्य-सभ्यता तथा आर्य-धर्म की गूंज हुआ करती थी, आज उन्हीं हमारे व्याख्यानों में हिन्दू, हिन्दू-जाति, हिन्दू-सभ्यता तथा हिन्दू-धर्म की गूंज सुनाई दे रही है। हमारे बड़े २ नेता तथा उपदेशक भी अपने व्याख्यानों तथा लेखों में हम हिन्दू, हमारी हिन्दू-जाति, हमारी हिन्दू-सभ्यता, हमारा हिन्दू-धर्म आदि कहते तथा लिखते हुए जरा भी नहीं सकुचाते, प्रत्युत बड़े गर्व से इन अवैदिक शब्दों को उच्चारण कर अपने को धन्य मान रहे हैं। इसका यदि आपने उदाहरण देखना हो तो आर्य-सभ्यता तथा विशुद्ध आर्य-धर्म के अद्वितीय प्रचारक भगवान् दयानन्द की पुण्यस्मृति में निकलने वाले उर्दू पत्र 'प्रकाश' के ऋषि अंक में देखें। गत दीपावली के उपर्युक्त अंक में पंजाब के प्रसिद्ध कार्यकर्ता तथा नेता श्री ला० देवीचन्दजी का एक लेख छपा है, जिसका शीर्षक है—"क्या हिन्दू-धर्म ग़ैर तबलीग़ी है ?" और इस बात को सिद्ध करने के लिये कि हिन्दू-

धर्म अप्रचारक धर्म नहीं है। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' 'यथेमां वाचम्' वेद के इन प्रमाणों को उद्धृत किया है। जिसका स्पष्ट यह तात्पर्य है कि उक्त महानुभाव वैदिक-धर्म को ही हिन्दू-धर्म समझते हैं। केवल समझते नही हीं अपितु उनका यह निश्चित् मत है कि वैदिक-धर्म ही हिन्दू-धर्म है—जैसा कि वे वेद के उपर्युक्त प्रमाणों को उद्धृत कर नीचे लिखते हैं—

"इन प्रमाणों की मौजूदगी में यह कहना कि हिन्दू-धर्म ग़ैर तबलीग़ी है, कितना बेमानी है।" कितने खेद की बात है कि हम प्रमाण तो दें सारे ससार को आर्य बनाने का और उससे सिद्ध करें हिन्दू-धर्म को 'ग़ैर तबलीग़ी धर्म' और उस लेख को लिखने का उद्देश्य यह हो कि ग़ैर हिन्दुओं को हिन्दू-धर्म में शामिल करना और वह भी दयानन्द के नाम पर स्थापित किये गये मिशन द्वारा जिनके जीवन का उद्देश्य हीं सारे संसार को आर्यं बनाना था। क्या हम यह दयानन्द के साथ अन्याय तथा विश्वासघात नहीं कर रहे ? मैं तो समझता हूँ कि यह सब शिथिलताएँ अपने को हिन्दू कहने के कारण ही हमारे अन्दर पैदा हुई हैं। यहां तक कि हम अपने को भी हिन्दुओं का एक अवयव अथवा फ़िरका ही समझने लगप ड़े हैं। इसका यदि प्रमाण लेना हो तो २ नम्बर सं० १९३४ 'आर्य-मित्र' के सम्पादकीय लेख में देखिये। 'आर्य-मित्र' के सम्पादक महोदय अपने मुख्य सम्पादकीय लेख में लिखते हैं—'आर्यसमाज ने कभी भी अपने को हिन्दुओं से अलग नहीं कहा।' कितने खेद की बात है कि जिस समाज का उद्देश्य हिन्दू आदि सब सम्प्रदायों को आर्य बनाना था, अब वही समाज अपने को भी

हिन्दुओं का एक फ़िरका मानने लग पड़ा है। और उसके नेता तथा सम्पादक बड़े गर्व से यह लिखते तथा कहते हैं कि 'आर्य-समाज ने कभी भी अपने को हिन्दुओं से अलग नहीं कहा।' जहां पहिले हमारे विद्वान् हम हिन्दू नहीं इस विषय पर दूसरों से शास्त्रार्थ किया करते थे। वहां आज वे ही विद्वान् हिन्दू शब्द को ठीक सिद्ध करने के लिये बड़े २ लेख लिख रहे हैं भला इससे वढ़कर और शोक की बात क्या होगी।

हम जहां अपने को हिन्दू कह कर अपने आर्यत्व के नाश का कारण बन रहे हैं, वहां ऋषि दयानन्द के साथ भी विश्वासघात तथा अन्याय कर रहे हैं। एक आर्य प्रतिनिधि सभा के मुख्य पत्र में सम्पा-दकीय लेख के स्थान पर एक आर्य महाशय का लेख है, वे अपने लेख में स्वामीजी से पहिले की अवस्था का वर्णन करते हुए लिखते हैं—'थोड़े ही समय में एक बड़े पैमाने पर हिन्दुत्व का ह्रास हो गया था।' फिर आगे चलकर आप लिखते हैं—'यदि महर्षि दयानन्द जैसे महापुरुष हमारे पथ-प्रदर्शक न होते तो हम, हमारा हिन्दुपन और हमारा हिन्दोस्तान कहां होता ?' आर्य-पुरुषों ! सोचो और विचार करो कि हम इस सम्बन्ध में कितने गिर चुके हैं ? और स्वयं गिर कर भगवान् दयानन्द के साथ भी कितना घोर अन्याय कर रहे हैं। वह दयानन्द कि जिसने इस दीन-हीन तथा मलीन हिन्दू-सभ्यता तथा हिन्दू-पन को नष्ट कर विशुद्ध आर्य-सभ्यता तथा आर्य-धर्म की स्थापना की। अब हम उनके ही अनुयायी उसी दयानन्द को हिन्दुत्व तथा हिन्दुपन का प्रचारक बता रहे हैं। कितने

शोक की बात है कि जहाँ हम पहिले "आर्यों की सन्तान हो, हिन्दू कहाना छोड़ दो" इस प्रकार के भजन गा-गा कर हिन्दुओं को भी आर्य कहलाने का उपदेश दिया करते थे, वहाँ आज हम ही अपने को हिन्दू कहने लग पड़े हैं। हमारे पूज्य नेता श्री० पं० लेखरामजी ने हिन्दू-पन तथा 'हिन्दू' नाम को हटाने के लिये भरसक प्रयत्न किया। हिन्दू-शब्द को समूल नष्ट करने के लिये उन्होंने 'आर्य तथा नमस्ते की तहकीक़ात' नामक पुस्तक लिखी। जिन्होंने उपर्युक्त पुस्तक के प्रारम्भ में ही यह लिखा—

"समय का परिवर्तन यहाँ तक हो चुका है, और अविद्या ने वह दिन दिखलाया है कि मनुष्यों को अपने शुद्ध नाम आदि के कहलाने की भी तमीज़ नहीं रही। सार्व-भौम, सर्वोत्तम, सभ्य और वास्तविक नाम को भुला कर एक अप्रसिद्ध, काल्पनिक, असभ्य, अनुचित् और कलङ्कित नाम से हमारे भाइयों को उल्फ़त और प्रेम होगया है और सच्चे तथा असली नाम का सत्कार और परिचय दूर होकर उसका जानना और मानना भी दूर होगया है। और यहाँ तक अविद्या का बसेरा हुआ कि बजाय आर्य के 'हिन्दू' और बजाय आर्यावर्त के 'हिन्दुस्तान' कहने और कहलाने लग पड़े। अफ़सोस ! सद हज़ार अफ़सोस !!"

आर्य पुरुषो ! ज़रा ध्यान से सुनो ! पं० लेखरामजी हमको क्या उपदेश दे रहे हैं। और अपने को हिन्दु कहने तथा कह-लाने वालों पर कितना शोक प्रकट कर रहे हैं। दूसरी ओर हम

हैं कि अपने इन पूज्य नेताओं की आशाओं को भी भंग करके स्वयं "आर्य" होते हुए भी अपने को हिन्दू ही कहते जा रहे हैं। कहां तो हमारा कर्तव्य था कि हम "कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्" भगवान् वेद की इस आज्ञानुसार हिन्दु आदि सब सम्प्रदायों को भी आर्य्य बनाते, और कहां हम भी अपने को हिन्दु कहने लग पड़े हैं। और "यथा नाम तथा गुणः" इस कहावत के अनुसार अपने अन्दर भी वही अवैदिक हिन्दुपन लाते जा रहे हैं। हम आर्यत्व से यहां तक गिर चुके हैं कि मर्दुम शुमारी में भी अपने को "आर्य" लिखाना पसंद नहीं करते। अपने को हिन्दु लिखाया जाय या आर्य इस बात का भी विचार करने के लिये प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा को अधिवेशन बुलाना पड़ता है। और उसमें भी बड़े जोरों के वाद-विवाद के पश्चात् कहीं जाकर अपने को आर्य लिखाने का निश्चय होता है। वह भी सर्व सम्मति से नहीं। आर्य बन्धुओं! जरा अपने हृदयों पर हाथ रख कर सोचो कि इस सम्बन्ध में हमारा कितना अधःपतन हो चुका है। मुसलमान, ईसाई बौद्ध आदि मतों को प्रचलित हुए सदियें बीत गईं किन्तु उन्होंने अभी तक अपने असली नाम का परिवर्तन नहीं किया, किन्तु हम पचास वर्षों में ही अपने असली नाम को तिलाञ्जलि देने जा रहे हैं। यदि भविष्य में हमारी यही अवस्था रही तो जैसे भगवान् दयानन्द के आने से पूर्व आर्य सभ्यता तथा आर्य नाम का सर्वथा लोप ही हो गया था, उसी प्रकार भविष्य में भी पवित्र आर्य-सभ्यता आर्य नाम तथा आर्यत्व का नाम शेष ही रह जायगा। और—

हिन्दू गुलाम काफ़िर जो हो चुके सभी थे ।
आर्य बना फिर उनको सरदार कर गया है ॥

इस प्रकार के हमारे भजन केवल स्वप्न-संसार का ही विषय बन जायेंगे । इस लिये आर्य पुरुषो ! चेतो ! और अपने कर्तव्य को पहिचानो ! जहां आप अपने अंदर से, अपने परिवार के अन्दर से, हिन्दुपन को सर्वथा निकाल दो, वहां कायरता, पराधीनता, तथा उत्साह-हीनता के द्योतक इस अवैदिक 'हिन्दु' नाम को भी सर्वथा तिलाञ्जलि देकर पुण्य के भागी बनो ! तथा अपने जीवनों को उच्च तथा पवित्र बनाते हुए नवजीवन, पावित्र्य, उत्साह तथा वीरता के द्योतक "आर्य" नाम से ही अपने को अलंकृत करो ।

जब हमारे अन्दर आर्यत्व था, जब हमारा बच्चा बच्चा अपने को आर्य कहने में ही गर्व समझता था । उस समय हम सुशील थे, धीर थे—और वीर थे । हमारे धर्म पर जरा भी संकट आ पड़ने पर हम वीर अर्जुन की भाँति छाती निकाल कर मैदाने-जंग में कूद पड़ते थे । तथा अपने पवित्र धर्म के ऊपर आए हुए संकट के काले बादलों को छिन्न-भिन्न करके ही दम लेते थे । उस समय हम थोड़े थे पर भारी से भारी संकट तथा आपत्ति के आ पड़ने पर भी किसी से सहायता की याचना नहीं करते थे । उस समय संसार की भारी से भारी शक्ति भी हम को देखकर काँप जाया करती थी । किन्तु जब से हमारे अन्दर हिन्दूपन घुसने लगा, और अपने को हिन्दुओं का एक फिरका मान हिन्दू ही कहने लग पड़े, तब से हमारे अन्दर कायरता, भीरुता तथा उत्साह-हीनता का वास होने लगा ।

अपने प्यारे वैदिक धर्म पर छोटे से छोटे संकट के आ पड़ने पर भी हम तो क्या हमारे बड़े-बड़े नेता भी उसके दूर करने में घबराने लगे। हम स्वयं पन्द्रह लाख होते हुए भी अपने संकट को दूर करने के लिये दूसरों का मुँह ताकने लगे। जहाँ पहले बड़ी से बड़ी शक्ति भी हम से भयभीत हो जाया करती थी, वहाँ छोटी से छोटी ताक़त भी हमको भयभीत करने लगी। भला इससे बढ़कर अपने अन्दर हिन्दूपन लाने और अपने को हिन्दू कहने का और अधिक भयंकर परिणाम क्या होगा ? आज पढ़े लिखे सनातनी विद्वान् अपने को "आर्य" कहने लग पड़े हैं। जर्मनी का प्रसिद्ध नेता हर हिटलर स्वयं ईसाई होता हुआ भी अपनी प्रजा तथा अपने को आर्य कहने में ही अपनी जाति का गौरव समझता है, किन्तु हम हैं कि स्वयं "आर्य" होते हुए भी आर्य नाम को छोड़ अपने को हिन्दु कहते जा रहे हैं। और यहां तक हिन्दू शब्द से प्रेम होता जा रहा है कि जब तक हम अपने लेखों में आर्य शब्द के पीछे कोष्ठ में (हिन्दू) न लिखें तब तक हमें अपना लेख शोभा ही नहीं देता। यदि हमारी ऐसी ही अवस्था रही तो पहले तो हम विशुद्ध आर्य थे और अब बने हुए आर्य (हिन्दू)। और कोई समय आयगा कि हम केवल संकुचित दायरे में बन्द (हिन्दू) ही रह जायेंगे।

हमने अपने को हिन्दू कहकर जहां अपना ह्रास किया है, वहां वैदिक धर्म प्रचार को भी भारी धक्का पहुंचाया है। हम जब अपने को आर्य कहते थे, और किरानी, कुरानी, पुरानी तथा जैनी आदि सम्प्रदायों से सर्वथा पृथक् विशुद्ध वैदिक धर्मी ही अपने को बताते थे। जब आर्य सभ्यता, आर्य-धर्म तथा आर्य

नाम की ही गूँज हुआ करती थी। उस समय ईसाई मुसलमान आदि सभी सम्प्रदायों के लोग हमारे व्याख्यानों में आते थे, और उनको प्रेम से सुनते थे, हमारे धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करते थे। किन्तु जब से हम अपने को हिन्दू कहने लगे। हमारे व्याख्यानों तथा लेखों में—हम हिन्दू, हमारा हिन्दू धर्म, हमारी हिन्दू सभ्यता आदि का ही बोल बाला होने लगा। हम यदि किसी विधर्मी की शुद्धि कर उसे वैदिक धर्म में भी प्रविष्ट करने लगे, तो समाचार पत्रों में हमने हिन्दुओं को खुश तथा प्रभावित करने के लिये यह छपाना प्रारम्भ कर दिया कि "अमुक आर्यसमाज मन्दिर में अमुक व्यक्ति ने इसलाम मजहब को छोड़ कर "हिन्दूधर्म" ग्रहण किया" तब से ही हमारे ईसाई तथा मुसलमान भाइयों ने यह समझ लिया कि आर्य-समाज भी कोई सार्वभौम संस्था नहीं, अपितु यह भी बुतपरस्त हिन्दुओं का ही एक फ़िरका है। इस लिये उन्होंने हमारे व्याख्यानों का सुनना तथा हमारी धर्म पुस्तकों का स्वाध्याय करना भी छोड़ दिया और हम केवल मात्र हिन्दुओं के लिये ही रह गये, और वह भी स्वयं हिन्दू बन कर।

वाचक-वृन्द ! अब आप स्वयं ही विचार करें कि हमने अपने को हिन्दु कहकर कितनी क्षति उठाई है। हमारा तथा हमारे धर्म प्रचार का कितना ह्रास हुआ है। इसलिये आर्य-पुरुषो ! मैं आपसे पुनः सविनय प्रार्थना करता हूँ कि यदि आप अपना सच्चा कल्याण चाहते हैं ? अपने प्यारे वैदिक धर्म को सार्वभौम बनाना चाहते हैं, तो आज से ही अपने को हिन्दू कहना छोड़ दो और अपने अन्दर से हिन्दूपन की जड़ को

सर्वथा उखेड़ कर फेंक दो। अपने व्याख्यानों, उपदेशों तथा लेखों में हम हिन्दू, हमारी हिन्दू सभ्यता, हमारा हिन्दू धर्म आदि की रट लगाना छोड़ दो। अपने अन्दर सच्चे "आर्यत्व" को धारण करते हुए अपने को सदा आर्य नाम से ही सुशोभित करो।

कई आर्य भाइयों का यह विचार है कि हम आर्य्य जाति को (जो कि अब हिन्दू जाति के नाम से पुकारी जाती है) आर्य शब्द से संगठित नहीं कर सकते! क्योंकि वर्तमान आर्य जाति के बहु संख्यक लोग आर्य शब्द की अपेक्षा हिन्दु शब्द को अधिक पसन्द करते हैं। इसी लिये हम धर्म और जातीय संगठन के पीछे हिन्दू शब्द का प्रयोग करते हैं। किन्तु मान्य आर्यबन्धुओं! यदि आप गम्भीरता पूर्वक विचार करेंगे तो अपने को हिन्दू कहाने का यह कारण भी निस्सार ही प्रतीत होगा। इतना ही नहीं प्रत्युत् मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि यदि आर्य जाति का सच्चा संगठन हो सकता है तो आर्य शब्द द्वारा ही हो सकता है हिन्दू-शब्द द्वारा कदापि नहीं। आर्य-शब्द द्वारा किया गया संगठन ही सच्चा संगठन होगा। उसमें जीवन होगा, उत्साह होगा। और शक्ति होगी। जो कि हिन्दु नाम के संगठन में कभी भी नहीं हो सकती। हमारा यह कहना भी भूल है कि अधिकतर लोग आर्य की अपेक्षा हिन्दू कहलाना अधिक पसंद करते हैं। आज शिक्षितवर्ग अपने को हिन्दु की अपेक्षा आर्य कहलाना अधिक पसंद करता है और सनातन-धर्मी विद्वान् भी अपने को आर्य कह रहे हैं। यहां तक कि काशी के पण्डितों ने तो आज से कई वर्ष पहिले यह व्यवस्था दे दी है कि हम हिन्दू नहीं

अपितु आर्य हैं। काशी के प्रसिद्ध विश्वनाथ मन्दिर के बाहर एक शिला लेख पर संस्कृत में सूचना लिखी है "आर्येतराणां प्रवेशोनिषिद्धः" अर्थात् आर्यों से भिन्न लोगों का प्रवेश इस मन्दिर में मना है। इस घोषणा से भी स्पष्ट प्रकट होता है कि काशी के विद्वान् ~~सर्व~~ सम्पूर्ण सनातन धर्मावलम्बियों को आर्य समझते हैं, हिन्दू कदापि नहीं। कतिपय वर्ष व्यतीत हुए एक सनातन धर्मी विद्वान् ने "पद्मचन्द्रकोश" नामक एक ३५ हजार संस्कृत शब्दों का ~~एक~~ कोश लिखा है। उपर्युक्त कोश में जहां हिन्दू शब्द का नाम तक भी नहीं वहां "आर्य" शब्द के उपर्युक्त विद्वान् ने इतने सुन्दर अर्थ किये हैं कि जिसको पढ़कर हृदय गद् गद् हो जाता है। उपरोक्त कोश में जो आर्य शब्द के अर्थ लिखे हैं, हम उन्हें पाठकों की सेवा में यहां उद्धृत करते हैं।

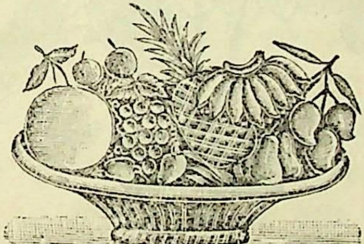
आर्य—स्वामी मालिक, गुरु, सहृद्, मित्र, श्रेष्ठ सब से अच्छा वृद्ध, बूढ़ा, लायक, नेक, श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुआ, पूजा के लायक उदार चरित, जिसका चित्त शांत हो, कर्तव्य करे, अकर्तव्य कभी न करे और जो यथार्थ आचार में रहे, वह जन आर्य है।

वाचक वृंद देखें कि उपर्युक्त सनातन धर्मी विद्वान् ने आर्य्य शब्द के कितने सुंदर तथा गौरवान्वित अर्थ किये हैं, इन सुन्दर अर्थों के देखने से ज्ञात होता है कि सनातन धर्मी विद्वानों के हृदयों में आर्य शब्द के प्रति कितना सन्मान है। यह तो हुए विद्वानों के विचार अब सर्व साधारण जनता को लीजिये।

दक्षिण भारत में जहां कि आर्यसमाज का प्रचार नहीं

के समान है, वहां के लोग वैदिक धर्मी (आर्यसमाजी) न होते हुए भी अपने को आर्य कहते हैं। वे लोग अपनी दुकानों के नाम, आर्य होटल, आर्य लाज, आर्यविश्रान्तिगृह आदि रखना ही अधिक पसंद करते हैं, "हिन्दु लाज आदि नहीं। इसके अतिरिक्त जैन और बौध भी अपने को आर्य ही समझते हैं, हिन्दू कदापि नहीं ! यहां तक कि उनका तो यह सिद्धांत है कि हम हिन्दु नहीं अपितु आर्य्य हैं। और तो क्या यदि ईसाई और मुसलमानों को भी हम अपने संगठन में सम्मिलित करना चाहें तो वे भी अपने को आर्य्य कहलाना तो स्वीकार कर लेंगे किन्तु हिन्दु कदापि नहीं। जैसा कि मैं पहिले लिख आया हूँ। आज जर्मनी का नेता हरहिटलर स्वयं ईसाई होता हुआ भी अपने को तथा अपनी जाति को आर्य नाम से पुकारने में अपना गौरव समझता है। उसने जर्मनी में यह घोषणा करदी है कि हमारी नेशन अर्थात् सभ्यता "आर्य्य सभ्यता" है यहूदी सभ्यता कदापि नहीं। अब मुसलमानों को लीजिये—एक स्थान पर मैं एक कट्टर मुसलमान से धार्मिक विषयों पर वार्तालाप कर रहा था। वार्तालाप करते समय उन्होंने मुझे कहा कि जैसी स्वामी दयानन्दजी ने आर्य शब्द की तारीफ अर्थात् लक्षण किया है। उसके मुतालिक तो हम (मुसलमान) भी आर्य्य हैं। उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि लोग हिन्दू शब्द की अपेक्षा आर्य शब्द को ही अधिक पसन्द करते हैं। ऐसी अवस्था में आर्य्य पुरुषो ! हम अपने देश और जाति का संगठन भी आर्य शब्द से ही भली प्रकार कर सकते हैं। हिन्दु शब्द से कदापि नहीं। अतः मेरा

आपसे पुनः निवेदन है कि आप अपने को हिन्दु कहाना छोड़ दो और अपने प्रत्येक व्यवहार में आर्य शब्द का ही प्रयोग करो। इसी में ही हमारा, हमारे देश तथा हमारी जाति का सच्चा हित है। अभी समय है कि हम अपने को हिन्दु कहने की इस भारी भूल से सचेत हों। यदि हम अब भी इस भारी भूल से सचेत न हुए तो फिर यह राज रोग केवल कठिन ही नहीं अपितु असाध्य हो जायगा। इसलिये आज के दिवस से ही यह प्रण करलो कि हम आज से अपने को किसी भी अवस्था में "हिन्दू" नहीं कहेंगे। भगवान् हमें बल दें कि हम हिन्दूपन तथा हिन्दू नाम को सर्वथा तिलाञ्जलि देकर सच्चे "आर्य" बनें तथा जीवन जागृति और उत्साह के द्योतक आर्य नाम से ही अपने को अलंकृत करें।





* ओ३म् *

आर्य्यसमाज के नियम।

१—सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदिमूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिये।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सब से प्रतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

पुस्तक मिलने के पते

१—अधिष्ठाता

विरजानन्द वेद-विद्यालय अजमेर

२—मैनेजर

राजपूताना बुक-हाऊस अजमेर

३—मैनेजर

आर्य्य-साहित्य-मंडल अजमेर

४—मैनेजर

सस्ता-साहित्य-मण्डल अजमेर

(केसरगञ्ज में डाकखाने के पास)

५—मन्त्री

अजमेर आर्य्य समाज अजमेर

६—मैनेजर

आदर्श प्रेस, अजमेर

(केसरगञ्ज में डाकखाने के पास)

आदर्श प्रेस, अजमेर में छपी—सञ्चालक—जीतमल लूणिया